|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 14: गुणत्रयविभागयोग

2/2 (श्लोक 11-27), रविवार, 08 जून 2025

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/Bs02loxG9cI

सत्त्व, रज, तम और गुणातीत के लक्षण

भारत माता, गीता माता, सुन्दर भजन, श्रीहनुमान चालीसा पाठ, पारम्परिक दीप प्रज्वलन, श्री गुरु चरण वन्दना एवं भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में वन्दन करते हुए अध्याय चौदह गुणत्रयविभागयोग के उत्तरार्द्ध विवेचन सत्र का आरम्भ हुआ।

श्रीमद्भगवद्गीता जी का मनन एवं चिन्तन- भगवत् प्राप्ति मार्ग

श्रीभगवान् की अतिशय मङ्गलमय कृपा से हम लोगों का ऐसा सद्भाग्य जाग्रत हुआ है कि हम लोग अपने इस मानव जीवन को सफल करने के लिए, उत्तम बनाने के लिए, जीवन के हर क्षेत्र में विजय प्राप्त करने के लिए, अपने इहलोक और परलोक का कल्याण करने के लिए प्रवृत्त हो गये हैं। अपने इस जीवन में श्रीमद्भगवद्गीता जी का अध्ययन करने लगे हैं।

पता नहीं हमारे किस जन्म के पुण्य हैं, पूर्व जन्मों के पुण्य हैं, हमारे पूर्वजों के सुकृत हैं या फिर हमारे इस जन्म में किसी सन्त-महापुरुष की कृपादृष्टि हम पर पड़ गई, जिससे हमारा ऐसा भाग्योदय हो गया है कि हम श्रीभगवद्गीता में लग गए हैं।

यह भाव हमें सतत रहना चाहिए कि हम श्रीमद्भगवद्गीता जी पढ़ने के लिए चुने गए हैं।

इस अध्याय का चिन्तन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। **गुणत्रयविभागयोग अत्यन्त गूढ़ अध्याय है**। यह **व्यवहारिक (practical) अध्याय** है। यदि किसी को जिज्ञासा है कि व्यवहारिक जीवन में **श्रीमद्भगवद्गीता जी** कैसे धारण करें तो उसके लिए **श्रीमद्भगवद्गीता जी** के सारे सूत्र इस अध्याय में हैं।

श्रीभगवान् ने इस अध्याय में तीनों गुणों का वर्णन किया है- सत, रज एवं तमो गुण।

सृष्टि के निर्माण में तीनों गुणों का प्रभाव

श्रीभगवान् कहते हैं कि सम्पूर्ण सृष्टि में जो हम देखते हैं, समझते हैं, जानते हैं, कल्पना करते हैं, सभी इन तीन गुणों से बनी है। सारे ग्रह, तारे, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी लोक जिसमें नाना प्रकार के जीव, जड़ पदार्थ, नदी, जलचर, नभचर, थलचर देखते हैं। स्त्री-पुरुष, काला-गोरा, अच्छा बुरा सब कुछ इन तीन गुणों से निर्मित हैं।

इन तीन गुणों से ऐसा किस प्रकार सम्भव हो पाता है, इसे एक उदाहरण से हम समझ सकते हैं-

एक कलर प्रिण्टर से हम हजारों रङ्गों के प्रिण्ट निकाल सकते हैं, परन्तु उसमें मुख्य रूप से चार ही रङ्गों की स्याही होती है-

- **C - Cyan**
- **Y - Yellow**
- **M - Magenta**
- **K - Black**

सारे रङ्ग इन ही चारों रङ्गों से बनते हैं। दो हजार रूपये के कलर प्रिण्टर से हम **एक करोड़ साठ लाख (सोलह मिलियन) रङ्ग प्रिण्ट कर सकते हैं**।

इसी प्रकार मोबाइल या लैपटॉप की स्क्रीन के **लिक्विड इलेक्ट्रॉनिक डिस्प्ले** (Liquid Electronic Display) में छोटे-छोटे बल्ब होते हैं जो मूलतः तीन ही रङ्ग होते हैं-

- **R - Red (लाल)**
- **G - Green (हरा)**
- **B - Blue (नीला)**

ये सारे रङ्ग इन ही तीन रङ्गों से मिलकर बनते हैं और रङ्गों की विभिन्नता हम पा लेते हैं।

जिस प्रकार ये सारे रङ्ग इन तीन रङ्गों से मिलकर बनते हैं। ऐसे ही श्रीभगवान् की प्रकृति में तीन तत्त्वों से सब कुछ निर्मित होता है। **तीनों गुणों - सत, रज और तम, की अलग-अलग मात्रा से सभी के स्वभाव, रुचि-अरुचि बनते हैं**।

वर्तमान के साढ़े सात अरब मनुष्यों में कोई भी दो मनुष्य ऐसे नहीं हैं जिनकी अँगुलियों के वलय के चिह्न (फिङ्गर प्रिण्ट) और दृष्टि पटल (रेटिना) एक समान हों। सबकी अँगुलियों के चिह्न और दृष्टि पटल एक-दूसरे से भिन्न हैं, इसलिए आधार कार्ड बनाने या बायोमैट्रिक स्कैन के लिए इनका प्रयोग करते हैं। इतना ही नहीं आज तक लाखों करोड़ों वर्षों में उत्पन्न किसी भी मनुष्य में, ये समान नहीं रहे।

इन तीन गुणों के कारण दो मनुष्यों का स्वभाव एक सा नहीं होता, स्वाद एक सा नहीं होता, रुचि और अरुचि एक सी नहीं होती। किसी को हरा रङ्ग प्रिय होता है तो किसी को नीला। किसी को रसगुल्ला प्रिय है तो किसी को समोसा प्रिय है।

इन तीन गुणों से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड और उनमें चौरासी लाख योनियाँ बनती हैं। चौरासी लाख योनियों में अनगिनत जीव हैं जो अलग-अलग प्रकार के हैं। **संसार में अनन्त वृक्ष हैं, प्रत्येक वृक्ष पर लाखों पत्तियाँ होती हैं**। **सभी एक-दूसरे से अलग होती हैं**। कोई भी दो पत्तियाँ समान नहीं होती।

श्रीभगवान् द्वारा निर्मित इस प्रकृति में विविधता का कारण

श्रीभगवान् की सम्पूर्ण प्रकृति विविधता से भरी है। सारी विविधता इन तीन गुणों के कारण है। **आकर्षण, नाम, रूप की भिन्नता का एकमात्र कारण सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण ही हैं**।

यदि एक हजार महिलाओं को बराबर मात्रा में आलू, मसाले, आटा, घी इत्यादि देकर कहा जाए कि खाना बनाकर खिलाओ। बराबर मात्रा के सामान से बनने के बाद भी सभी महिलाओं द्वारा बने खाने का स्वाद अलग-अलग होगा। सबके स्वाद में भिन्नता

होगी। सबको एक जैसा सामान दिया, परन्तु सामान कौन कितनी मात्रा में, कितना और कब डालता है और उसे किस प्रकार से पकाएगा, यह उसके स्वभाव और व्यवहार पर निर्भर करता है। इस कारण सबके भोजन का स्वाद अलग-अलग होगा। कुछ बहनों का तो इतना भिन्न होगा कि लगेगा ही नहीं इन ही पदार्थों से बना है। किसी का बहुत तीखा होगा और किसी का बिल्कुल सादा होगा।

यह बिल्कुल साधारण सी बात है कि छोटे से पदार्थ से भी इतना बड़ा अन्तर आ सकता है। उनमें स्वाद तो अलग होगा ही, परन्तु देखने में भी बिल्कुल अलग होंगे। रोटी भी अलग दिखेगी, सब्जी भी अलग दिखेगी और परोसने का तरीका भी बिल्कुल अलग होगा। मूल पदार्थ तो एक ही है, परन्तु सामने आने पर उनमें भिन्नता दिखेगी।

इसी प्रकार प्रकृति में सत्त्व, रज और तम तीनों गुण विद्यमान हैं। **इन तीनों गुणों में कोई भी गुण शून्य या सौ प्रतिशत नहीं है**। **कोई भी सौ प्रतिशत सात्त्विक, सौ प्रतिशत राजसिक या सौ प्रतिशत तामसिक नहीं होता**। सभी में तीनों गुण विद्यमान होते हैं, पर **एक गुण की प्रधानता होती है**। **जिस गुण की प्रधानता होगी, जीव का आचरण उस गुण पर ही आधारित होगा**।

जिस व्यक्ति में जिस गुण की प्रधानता होगी उसका स्वभाव वैसा ही होगा।

जिसके जीवन में सत्त्वगुण की प्रधानता होगी, वह श्रीभगवान् समान, देवता समान लगेगा। देख कर ही कहते हैं अरे! कितना सन्त है, जैसे पूज्य स्वामी जी।

- **सत्त्वगुणी- शान्त स्वभाव के होंगे।**
- **रजोगुणी- हिलते-डुलते रहते हैं, अधिक बोलते हैं, इधर-उधर घूमते रहते हैं।**
- **तमोगुणी - पड़े रहते हैं। सोते ही रहते हैं।**

श्रीभगवान् ने ग्यारहवें श्लोक में सत्त्वगुणी के लक्षण बताए हैं।
बारहवें श्लोक में रजोगुणी के लक्षण बताए हैं।
तेरहवें श्लोक में तमोगुणी के लक्षण बताए हैं।

14.11

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्, प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं(म्) यदा तदा विद्याद्, विवृद्धं(म्) सत्त्वमित्युत॥14.11॥

जब इस मनुष्यशरीर में सब द्वारों (इन्द्रियों और अन्तःकरण) में प्रकाश (स्वच्छता) और ज्ञान (विवेक) प्रकट हो जाता है, तब जानना चाहिये कि सत्त्वगुण बढ़ा हुआ है।

विवेचन-

श्रीभगवान् कहते हैं **सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्**
इस देह में इन्द्रियों के जितने भी द्वार हैं।

नवद्वारे पुरे देह- देह और अन्तःकरण ।

ये पुर हैं, इसको धारण करने वाला पुरुष कहलाता हैं (**स्त्री या पुरुष नहीं, जीवात्मा**)। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और अन्त:करण चतुष्टय। **आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं**।

मन, बुद्धि, चित्त और अहं ये अन्त:करण चतुष्टय हैं।

इन इन्द्रियों से मैं क्या देखता हूँ? क्या सुनता हूँ? क्या बोलता हूँ? यह स्पष्ट होना चाहिए।

श्रीभगवान् कहते हैं कि प्रकाश- ज्ञान, सत्त्व होने से इनमें चेतनता और विवेक शक्ति उत्पन्न होती है। आपके भीतर जितना सत्त्व गुण प्रधान होता है, आप उतना अधिक सक्रिय हो जाते हैं। इन्द्रियों और अन्तःकरण में तुरन्त प्रकाश ज्ञान हो जाता है।

अर्थात्

ऐसे नौ द्वार हैं। जब इनमें प्रकाश और ज्ञान प्रकट होता है अर्थात् चेतना एवं विवेक शक्ति के अविरल प्रवाह से सत्त्व गुण का वर्चस्व होता है। किसी भी प्रकार की अस्थिरता नहीं होती। अन्त:करण शान्त होने सहित अधिक सक्रिय हो जाता है। सत्त्व की प्रधानता होने पर जीव स्वतः ही समझ लेता है कि उसके द्वारा किया गया कौन सा कार्य उचित है तथा कौन सा अनुचित।

The more satvik you are, the more active you are.

मैं क्या देखूँ? क्या न देखूँ? क्या सुनूँ? क्या न सुनूँ? क्या करूँ? जिससे मुझमें प्रकाश आ जाए।
जो श्रेयस है उसे करूँ और जो श्रेयस नहीं है उसे न करूँ।
उसके पास जाने पर वह प्रश्नों का तुरन्त उत्तर देगा।

वह अपने ध्येय पर केन्द्रित है, भीतर से प्रकाशमान है, उसके मन में विचारों की स्पष्टता है कि उसे क्या करना है औचेतन नहीं करना है।

He is fully focused, bचतुष्टय lside, he has clarity of thoughts.

सत्त्व गुण प्रधान जीव- प्रकाश के कारण उसे ज्ञान होगा।

उसे अपने रजस और तमस का भान होगा। उसे अपनी गलती का ज्ञान होगा। वह बहाने नहीं बनाता है। वह मेरी गलती है, मुझे नहीं करना चाहिए था। वह कहता है कि मैंने ऐसा किया है। इस कारण से हो गया, उस कारण से हो गया, कोई कारण नहीं बताता। वह बहाने नहीं ढूँढता।

रजोगुणी जीव- त्रुटि होने पर किसी अन्य प्राणी या परिस्थिति पर उसका दोषारोपण करते हैं।

राजस, तमस अपनी गलती नहीं मानते। दूसरे को दोषी ठहराते हैं। वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति को कारण बताते हैं-

सामान खराब था, इसलिए गलत हुआ।
व्यक्ति गलत था, इसलिए गलत हुआ।
उसने किया, इसलिए गलत हुआ।
उसने ऐसा न कहा होता तो मैं ऐसा नहीं करता।

सात्त्विक व्यक्ति कभी दूसरे को गलत नहीं कहता। सामने वाला बोलता है अरे! तुम्हारी गलती नहीं थी। तुमने गलत नहीं किया था। तब वह कहेगा कि वो कुछ भी करता उसकी बात थी पर मैंने तो गलत किया था।
जितना अपनी गलती मानने का स्वभाव बढ़ेगा उतना सत्त्वगुण बढ़ेगा।

जितना अपनी भूल को कम मानेंगे, उसका कारण दूसरों को बताएँगे, स्पष्टीकरण देंगे। बहाने ढूँढते हैं कि मैं तो ऐसा नहीं हूँ, उसने कहा था तो हुआ। जितना अपनी गलती के लिए बहाने ढूँढेंगे, उतना रजस बढ़ेगा।

तमोगुणी जीव- अपनी गलती के लिए दूसरे को अपराधी मानना तम है।

- **अपनी गलती के लिए स्वयं को दोषी मानना सत्त्व है।**
- **अपनी गलती के लिए बहाने बनाना रजस है।**
- **अपनी गलती के लिए दूसरे को दोषी ठहराना तम है।**

नब्बे प्रतिशत लोग बाद में कहते हैं कि मुझे लग रहा था और समझ भी आ रहा था कि यह कार्य अनुचित है फिर भी मैंने कर दिया। उस समय सत्त्व की कमी थी। मुझे लग रहा था कि नहीं बोलूँ, उठ कर चला जाऊँ। पर नहीं गया, बोल दिया।

बाद में समझ आना सत्त्व की अनुपलब्धता है, जिस कारण गलत हुआ।
उसी समय समझ आना सत्त्व की प्रधानता है।

14.12

लोभः(फ्) प्रवृत्तिरारम्भः(ख्), कर्मणामशमः(स्) स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे भरतर्षभ॥14.12॥

हे भरतवंशमें श्रेष्ठ अर्जुन ! रजोगुण के बढ़ने पर लोभ, प्रवृत्ति, कर्मोंका आरम्भ, अशान्ति और स्पृहा -- ये वृत्तियाँ पैदा होती हैं।

विवेचन-

श्रीभगवान् ने अर्जुन को रजोगुण के पाँच लक्षण बताए-

1. काम,
2. क्रोध,
3. लोभ,
4. मोह,
5. अहङ्कार।

श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन रजोगुण के बढ़ने पर मनुष्य में पाँच प्रवृतियों की वृद्धि होती हैं-

1. लोभ,
2. प्रवृत्ति,
3. कर्मों का आरम्भ,
4. अशान्ति,
5. स्पृहा।

लोभ-
जितना रजोगुण होगा उतना और अधिक पाने का लोभ बढ़ेगा।
मोबाइल का नया मॉडल दिखेगा, नए वस्त्र दिखेंगे, घर के लिए नया सामान दिखेगा, इस बार दीवारों पर ऐसा रङ्ग करवाऊँगा। मनुष्य नाना प्रकार की कल्पनाएँ करता रहता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं-
जिमि अति लाभ लोभ अधिकाई।

वास्तव में धन बढ़ने पर धन का महत्त्व कम हो जाना चाहिए। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होना चाहिए, किन्तु ऐसा नहीं होता, जिसके पास कम धन होता है उसके लिए धन का महत्त्व कम होता है।
हम ऐसा कहते है अमुक व्यक्ति इसलिए दरिद्र है क्योंकि उसके लिए धन का मूल्य नहीं है। उसे सौ रुपये दिए, वह सौ रुपये खर्च करके आ गया।

- हमारे जीवन में कम धन है और धन का महत्त्व भी कम होता है।
- हमारे जीवन में धन अधिक है लेकिन जीवन-मूल्य कम होता हैं।

हमारे आदर्श ऊँचे होने चाहिएँ और धन का महत्त्व कम होना चाहिए, लेकिन हम धन से चिपक जाते हैं।

पहले दस हजार रुपये वेतन था। फिर पचास हज़ार हुआ और अब एक लाख रुपए है। जब दस हजार वेतन था तो कोई EMI नहीं थी। पचास हजार होने से EMI पर सामान आने लगा। एक लाख के वेतन पर डर लगता है कि नौकरी गई तो EMI कैसे देंगे? तनाव में रहते हैं और तनाव से बीमार हो जाते हैं। जब वेतन दस हजार था तब कोई तनाव नहीं था, बीमारी भी नहीं थी।

धन का अर्जन किस लिए करते हैं। धन का उपयोग सुख-शान्ति के लिए है, किन्तु हम सुख-शान्ति देकर धन खरीदते हैं। उसके लिए झगड़ा भी करते हैं, यह रजोगुण है।

पर्याप्त कमाई है फिर भी धन का अभाव है, यह तमोगुण है।

अपवाद हो सकते है।

धन बढ़ता गया वासनाएँ(इच्छाएँ) बढ़ती गईं।

लोभ तीन प्रकार का होता है -
1. यश का लोभ,
2. धन का लोभ,
3. साधनों का लोभ।

कामना बुरी नहीं है। लोभ बुरा है।

- लोभवश, अन्यायपूर्वक कामनाओं की पूर्ति करना अनुचित है।

कामनाओं की पूर्ति करने के लिए न्याययुक्त धनार्जन करना और न्याययुक्त यश का भोग करना शास्त्रोचित है।

श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं-
हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
अर्थात्

श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन युद्ध में मारे गए तो स्वर्ग को भोगना और जीते तो धरती पर राज्य करना।

श्रीभगवान् भोगों के लिए मना नहीं करते। श्रीभगवान् कहते है कि न्यायपूर्वक धन अर्जित करो, दूसरों के अधिकार का हनन नहीं होना चाहिए।

प्रवृति-
रजोगुण बढ़ने से लोभ बढ़ता है। जितना रजोगुण बढ़ेगा, मनुष्य की क्रियाशीलता बढ़ेगी।

प्रवृत्ति बढ़ती है तो वह कुछ-न-कुछ हरकत करता रहेगा, बैठा है तो पैर हिलाता रहेगा, साड़ी का पल्लू लपेटता रहेगा, बालों में हाथ फिराता रहेगा, घास उखाड़ता रहेगा, इधर-उधर घूमता रहेगा। उसे हर जानकारी चाहिए। काम वाली बाई के आने पर उसे सारे मोहल्ले की जानकारी चाहिए। वह **प्रवृत्तिशील** है। सब कुछ पता होना चाहिए। बहुत दिन हो गए तो तुमसे बात कर लेते हैं।

कर्मणाम्-
आवश्यकता नहीं होने पर भी कुछ करना।
नए-नए कर्मों का आरम्भ करना है।

अशम-
इन्द्रियों पर, मन पर नियन्त्रण नहीं रहता। मन बेहद चञ्चल होता है। इन्द्रियों पर नियन्त्रण नहीं होता।

रजोगुणी व्यक्ति चञ्चल होता है। जो व्यक्ति जितना रजोगुणी होगा उतना अधिक चञ्चल होगा। उसकी दृष्टि उतनी ही चञ्चल होगी, अस्थिर होगी। यह चञ्चलता उस की आँखों में दिखती है। कोई व्यक्ति चञ्चल है या नहीं, यह उसकी आँखें देखकर बताया जा सकता है।

सतोगुणी व्यक्ति की दृष्टि स्थिर होगी, एक स्थान पर टिकी होगी।

रजोगुणी व्यक्ति की दृष्टि चारों ओर घूमती रहती है। स्कैनर की तरह काम करती है। जिसके नेत्र जितने चञ्चल होते हैं उसका मन उतना चञ्चल होता है। कुछ लोग जैसे ही कहीं जाते हैं, उनकी दृष्टि चारों ओर घूमकर स्कैनर की तरह काम करती है। घर कितना बड़ा है, किराया कितना होगा, पर्दे कैसे लगे हैं? अच्छी हो या बुरी मन में हलचल होती है।

जितनी मन की चञ्चलता, उतनी रज की प्रधानता।
जितना मन शान्त उतना सत्त्व प्रधान।

स्पृहा -
रजोगुण का सबसे बडा लक्षण है स्पृहा।

जिस विषय को देखा उसकी प्रवृत्ति तुरन्त उससे चिपक जाएगी। बड़ा मोबाइल, घर अच्छा है, गाड़ी कितनी अच्छी है, ऐनक सुन्दर है। फेसबुक पर कितनी अच्छी पोस्ट साझा की है, वह हर जगह चिपकता है।

लड्डू खाया तो बोले अरे वाह लड्डू कहाँ से आए? लड्डू तो खा लिया, पर मन लड्डू से चिपक गया। अमुक जगह गया था तो वहाँ बहुत अच्छे लड्डू खाए थे। जब दोबारा जाऊँगा तो फिर से लड्डू खाऊँगा। पाँच साल बाद भी लड्डू की बात आने पर फिर से किस्सा दोहराया जाएगा। पाँच साल बाद भी लड्डू का स्वाद याद है।
समस्या लड्डुओं में नहीं उनसे चिपकने में है।

समस्या भोगों में नहीं भोगों से चिपकने से है।

किसी की पोशाक देखकर चिपक गए। कहाँ से ली? किस ब्राण्ड की है?

जिस क्षेत्र में रुचि, मनुष्य वहीं चिपक कर जाता है।

iphone लेना था, iphone ले लिया। किसी ने बोला अरे pro वाला लेना था। iphone pro ले लिया। उसके बाद किसी अन्य ने बोला अरे अब तो नया version आ गया है वह लेना। मन चिपकता रहता है। किसी ने iphone लेने के लिए अपनी किडनी (kidney) बेच दी। उसे समझ नहीं आया कि फिर से नया माडल आने पर क्या होगा?

14.13

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च, प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे कुरुनन्दन॥14.13॥

हे कुरुनन्दन! तमोगुण के बढ़ने पर अप्रकाश, अप्रवृत्ति तथा प्रमाद और मोह – ये वृत्तियाँ भी पैदा होती हैं।

विवेचन-
श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं कि,

तमोगुण के बढ़ने पर अन्तःकरण में अप्रकाश हो जाता है।

तमोगुण सत्त्वगुण का विपरीत है।

सतोगुणी और तमोगुणी दोनों शान्त हैं-

एक शान्त बैठा है, दूसरा पड़ा है।

देखने में दोनों अक्रिय हैं पर दोनों की प्रवृत्ति में बहुत अन्तर है।

सत्त्वगुणी की बुद्धि में प्रकाश है।
तमोगुणी की बुद्धि में अप्रकाश, अन्धकार है।

सत्त्वगुणी को उचित-अनुचित का ज्ञान है।
तमोगुणी को उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं है।

सत्त्वगुणी सही बात को सही और अनुचित को अनुचित मानता है।

तमोगुणी किसी प्रकार भी नहीं समझता। उसे कोई बात समझ नहीं आती। सही बात करने वाले से झगड़ा करने लगता है। लोग चाहते हैं कि उसका कुछ भला हो जाए पर वह काटने को दौड़ता है। लोग कहते हैं कि हमें उससे कुछ नहीं चाहिए। उसके भले की बात करो तो उसे समझ नहीं आती। पता नहीं कैसी बुद्धि है। भले की बात करो तो बुराई ढूँढ लेता है। यह तम है।

अप्रवृत्ति-
जो करना चाहिए उसे टाल देता है।
जो अभी नहीं करना या जो आवश्यक नहीं है, उसे करता है।

जो नहीं करने योग्य हैं वे कार्य अभी करने हैं। जो करने योग्य हैं उन्हें नहीं करना।

अप्रमाद- व्यर्थ चेष्टा
व्यर्थ कार्यों (unproductive work) में लगा रहता है। बैठे-बैठे घण्टों रील बनाने में लगा रहता है।

मोह-
नींद बहुत आती है। बस पड़े रहते हैं। स्नान करने को कहो तो भी अच्छा नहीं लगता। कहता है, शेरों ने भी कभी मुँह धोया है। भाँति-भाँति के बहाने ढूँढ लेता है। सुबह उठता है, कठिनाई से खाता है, फिर जाकर पड़ जाता है। पूछने पर कि ग्यारह बजे तो सोकर उठा है अब फिर सो गया। वह कहता है कि थक गया, कुछ देर लेटने दो।

तमोगुणी मनुष्य को अपने हानि-लाभ का ध्यान नहीं रहता।

पञ्चतन्त्र में बन्दर और मगरमच्छ की कहानी है- तमोगुण का उचित उदाहरण

बन्दर और मगरमच्छ दोनों दोस्त थे। बन्दर प्रतिदिन मगरमच्छ को जामुन खिलाता था। वह अपनी पत्नी के लिए भी जामुन लेकर जाता था। एक बार मगरमच्छ ने यह बात अपनी पत्नी को बताई। मगरमच्छ की पत्नी ने कहा कि बन्दर जामुन के वृक्ष पर रहता है उसका कलेजा कितना मीठा होगा। मुझे उसका कलेजा खाना है। उसने बन्दर का कलेजा खाने की ठान ली। मगरमच्छ ने बन्दर को अपने घर आने का न्योता दिया। जब मगरमच्छ बन्दर को ले जा रहा था तो बीच रास्ते में उसने बन्दर को सच्ची बात बताई।

बन्दर सत्त्वगुणी था, प्रकाश से भरा हुआ था। बन्दर ने कहा कि अरे! तुम्हें पता नहीं कि बन्दरों का कलेजा तो बाहर लटका होता है। मुझे पेड़ की तरफ ले चलो। मैं दे देता हूँ। जैसे ही मगरमच्छ किनारे की तरफ गया। बन्दर पेड़ पर लपक गया और मगरमच्छ से पीछा छुड़ाया।

मगरमच्छ में तमोगुण है, मोह है, मूढ़ता है।

मोह करने वाला, अपने उपकार करने वाले का भी अपकार करता है।

14.14

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु, प्रलयं(म्) याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां(म्) लोकान्, अमलान्प्रतिपद्यते॥14.14॥

जिस समय सत्त्वगुण बढ़ा हो, उस समय यदि देहधारी मनुष्य मर जाता है (तो वह) उत्तमवेत्ताओं के निर्मल लोकों में जाता है।

विवेचन-

सत्त्वगुण प्रधान मनुष्य की मरणोपरान्त गति- उत्तम लोकों की प्राप्ति

श्रीभगवान् ने सोचा कि अर्जुन पूछेंगे कि इनकी गति क्या होगी?

श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं कि जब मनुष्य में सत्त्वगुण की वृद्धि होती है और सत्त्वगुण की प्रधानता में वह मृत्यु को प्राप्त होता है।

अर्थात्

मृत्यु के समय जिसका सत्त्वगुण प्रधान होता है, **वह जीव उत्तम कर्म करने वाले दिव्य, उत्तम, निर्मल स्वर्ग आदि उत्तम लोकों को प्राप्त होता है**।

14.15

रजसि प्रलयं(ङ्) गत्वा, कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि, मूढयोनिषु जायते॥14.15॥

रजोगुण के बढ़ने पर मरने वाला प्राणी कर्मसंगी मनुष्य योनि में जन्म लेता है तथा तमोगुण के बढ़ने पर मरने वाला मूढ़ योनियों में जन्म लेता है।

विवेचन-

रजोगुणी एवं तमोगुणी मनुष्यों की मरणोपरान्त गति।

श्रीभगवान् कहते हैं कि **रजोगुण के बढ़ने पर मृत्यु को प्राप्त होने वाले मनुष्य को कर्मों में आसक्ति वाली मनुष्य योनि में जन्म लेना पड़ता है**।

तमोगुण की वृद्धि होने पर मरने वाला मनुष्य कीट, पशु आदि मूढ़ योनियों में उत्पन्न होता है।

14.16

कर्मणः(स्) सुकृतस्याहुः(स्), सात्त्विकं(न्) निर्मलं(म्) फलम्।
रजसस्तु फलं(न्) दुःखम्, अज्ञानं(न्) तमसः(फ्) फलम्॥14.16॥

विवेकी पुरुषों ने – शुभ कर्म का तो सात्त्विक निर्मल फल कहा है, राजस कर्म का फल दुःख (कहा है और) तामस कर्म का फल अज्ञान (मूढ़ता) कहा है।

विवेचन-
श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं कि-

श्रेष्ठ कर्म का फल सात्त्विक सुख, ज्ञान और वैराग्य है।
राजस कर्म का फल दुःख और
तामस का फल अज्ञानता है।

जब दु:खी होते हैं, हमें लगता है कि जीवन में बड़ा क्लेश है। हम सोचते हैं कि श्रीभगवान् ने मेरे साथ ऐसा क्यों किया? मैं तो सब अच्छा ही करता हूँ, फिर भी मेरे साथ बुरा ही होता है, यह रजोगुण प्रधान है।

जब विपरीत कार्य करते है तब तमोगुण प्रधान है।

जब प्रसन्न होने के लिए किसी साधन की आवश्यकता नहीं होती, व्यक्ति आराम से बैठकर शान्त है, भीतर से प्रसन्न है। **उसकी प्रसन्नता किसी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति पर निर्भर नहीं होती, तब सत्त्व की प्रधानता होती है।**

सबके जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब हम बिना बात प्रसन्नता का अनुभव करते हैं, तब **सत्त्वगुण प्रधान** है।

चञ्चलता अधिक है, तब **रजोगुण प्रधान** है।

आलस्य के कारण यूँ ही पड़े रहते हैं, तब **तमोगुण प्रधान** है।

14.17

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं(म्), रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो, भवतोऽज्ञानमेव च॥14.17॥

सत्त्वगुण से ज्ञान और रजोगुण से लोभ (आदि) ही उत्पन्न होते हैं; तमोगुण से प्रमाद, मोह एवं अज्ञान भी उत्पन्न होते हैं।

विवेचन-
श्रीभगवान् कहते हैं कि

- **सत्त्वगुण से ज्ञान उत्पन्न होता है।**
-

- **रजोगुण से लोभ उत्पन्न होता है।**
-
- **तमोगुण से प्रमाद, मोह एवं अज्ञान उत्पन्न होते हैं।**

14.18

ऊर्ध्वं(ङ्) गच्छन्ति सत्त्वस्था, मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था, अधो गच्छन्ति तामसाः॥14.18॥

सत्त्वगुण में स्थित मनुष्य ऊर्ध्वलोकों में जाते हैं, रजोगुण में स्थित मनुष्य मृत्युलोक में जन्म लेते हैं (और) निन्दनीय तमोगुण की वृत्ति में स्थित तामस मनुष्य अधोगति में जाते हैं।

विवेचन-
श्रीभगवान् कहते हैं कि-

- **सत्त्व गुण में स्थित मनुष्य स्वर्ग आदि उच्च लोकों को जाते हैं।**
- **रजोगुण में स्थित मनुष्य, मृत्यु लोक में जन्म लेते हैं।**
- **तमोगुण में अर्थात् निद्रा, प्रमाद, आलस्य में रहने वाले तामसिक वृत्ति वाले मनुष्य कीट, पशु, नीच योनियों को प्राप्त करते हैं। भूत-पिशाच आदि योनियों में भी जाते हैं। अधोगति को प्राप्त होते हैं।**

14.19

नान्यं(ङ्) गुणेभ्यः(ख्) कर्तारं(म्), यदा द्रष्टानुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं(म्) वेत्ति, मद्भावं(म्) सोऽधिगच्छति॥14.19॥

जब विवेकी (विचार कुशल) मनुष्य तीनों गुणों के (सिवाय) अन्य किसी को कर्ता नहीं देखता और (अपने को) गुणों से पर अनुभव करता है, (तब) वह मेरे सत्स्वरूप को प्राप्त हो जाता है।

विवेचन-
गुणातीत होकर योगी का श्रीभगवान् के वास्तविक स्वरूप को जानना एवं सच्चिदानन्द से एकरूप हो जाना।

श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन! **जिस समय दृष्टा तीनों गुणों के अतिरिक्त किसी अन्य को कर्त्ता नहीं देखता और तीनों गुणों से परे मेरे गुणातीत सच्चिदानन्द स्वरूप को जानता है, उस समय वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है**।

श्रीभगवान् कहते हैं, अर्जुन! अब तक तुमने **सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण से आच्छादित योगी को जाना**।

लेकिन इसके अतिरिक्त **एक योगी ऐसा भी है जो तीनों गुणों को ही कर्त्ता मानता है**। वह यह भी जानता है कि मैं कुछ नहीं करता। वह जानता है कि मुझ में ये तीनों गुण नहीं है लेकिन मुझसे ही तीनों गुण हैं। वह इन तीनों गुणों से पार मेरे ही गुणातीत स्वरूप को प्राप्त होता है।

14.20

गुणानेतानतीत्य त्रीन्, देही देहसमुद्भवान्।

जन्ममृत्युजरादुःखैः(र्), विमुक्तोऽमृतमश्नुते॥14.20॥

देहधारी (विवेकी मनुष्य) देह को उत्पन्न करने वाले इन तीनों गुणों का अतिक्रमण करके जन्म, मृत्यु और वृद्धावस्था रूप दुःखों से रहित हुआ अमरता का अनुभव करता है।

विवेचन-

मनुष्य का गुणातीत होना- श्रेष्ठम योगी की पहचान।

श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन! **मनुष्य इन तीनों गुणों का उल्लङ्घन करके जन्म-मृत्यु, वृद्धावस्था, व्याधि, सब प्रकार के सुख-दुःख से रहित होकर मनुष्य परमानन्द को प्राप्त हो जाता है।**

श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन तमोगुण से रजोगुण श्रेष्ठ है और रजोगुण से सत्त्व गुण श्रेष्ठ है, लेकिन सत्त्वगुण अन्तिम सीढ़ी नहीं है। पहले जीवन में तमोगुण और रजोगुण को दबाकर सत्त्वगुण को बढ़ाओ। फिर एक समय के बाद इस सत्त्व गुण का उल्लङ्घन करके सत्त्व गुण के भी पार चले जाओ।

14.21

अर्जुन उवाच
कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतान्, अतीतो भवति प्रभो।
किमाचारः(ख्) कथं(ञ्) चैतांस्, त्रीन्गुणानतिवर्तते॥14.21॥

अर्जुन बोले – हे प्रभो! इन तीनों गुणों से अतीत हुआ मनुष्य किन लक्षणों से (युक्त) होता है? उसके आचरण कैसे होते हैं? और इन तीनों गुणों का अतिक्रमण कैसे किया जा सकता है?

विवेचन-
यह सुनकर अर्जुन आश्चर्यचकित हो गए। श्रीभगवान् से पूछते हैं कि आप जिस गुणातीत की बात कर रहे हैं, क्या इस प्रकार का मनुष्य होना सम्भव है? जो इन तीन गुणों से परे हो और गुणातीत हो।

उन्होंने श्रीभगवान् से तीन प्रश्न पूछे-
1. इन तीन गुणों से अतीत पुरुष के लक्षण क्या हैं?
2. उसका आचरण कैसा है?
3. किस उपाय से उसके जैसा बना जा सकता है?

अर्जुन ने श्रीभगवान् से पीएचडी के स्तर का प्रश्न किया। श्रीभगवान् ने अर्जुन को कहा कि गुणातीत के लक्षण समझ लेना किन्तु इनका प्रयोग दूसरों पर नहीं करना। यह सिद्धों की, योगियों की बात है। यह सिद्ध स्थिति की बात है।

भगवान् श्रीकृष्ण एवं दुर्वासा ऋषि का गुणातीत आचरण- एक कथा

एक बार भगवान् श्रीकृष्ण गोपियों को उपदेश दे रहे थे। गोपियों ने कहा कि आप उपदेश तो बड़े-बड़े करते हो किन्तु स्वयं कैसा आचरण करते हो? माखन चुरा कर खाते हो, परेशान करते हो।

श्रीभगवान् को लगा कि गोपियों को शिक्षा देनी पड़ेगी। अगले दिन भगवान् श्रीकृष्ण ने गोपियों से कहा कि यमुना जी के पार दुर्वासा ऋषि पधारे हैं।

दुर्वासा ऋषि केवल दूर्वा का भक्षण करते थे इसलिए उनका नाम दुर्वासा पड़ा। भगवान् श्रीकृष्ण ने गोपियों से कहा कि तुम दुर्वासा ऋषि के लिए छप्पन प्रकार का भोग बनाकर ले जाओ। यदि वे प्रसन्न हो गए तो तुम्हें आशीर्वाद देंगे। गोपियाँ भगवान्

श्रीकृष्ण का आदर करती थीं इसलिए वे भाँति-भाँति के व्यञ्जन बनाकर जब यमुना जी के किनारे पहुँची तो देखा यमुना जी का जलस्तर बढ़ा हुआ है। भगवान् श्रीकृष्ण के पास जाकर उन्होंने पूछा कि हमने दुर्वासा ऋषि के लिए भोजन तैयार किया है पर यमुना जी का जलस्तर बड़ा हुआ है, कैसे जाएँ?

तब भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा कि जाकर यमुना मैया से कहो कि यदि कृष्ण ने स्त्री का मुख नहीं देखा तो रास्ता दे दो। गोपियाँ असमञ्जस में पड़ गई कि अभी तो भगवान् श्रीकृष्ण हम सब का मुख देखकर बात कर रहे हैं। यह ऐसा कैसे बोल सकते हैं? गोपियाँ भगवान् श्रीकृष्ण का आदर करती थीं। उनकी बात मानकर गोपियों ने यमुना जी के सामने जाकर ऐसा ही कहा। तब यमुना जी ने रास्ता दे दिया। यमुना जी को पार कर दुर्वासा ऋषि के पास पहुँचीं।

दुर्वासा जी को प्रणाम करके उन्होंने कहा कि हमें भगवान् श्रीकृष्ण ने आपको भोजन देने को कहा है। दुर्वासा ऋषि ने कहा वैसे तो मैं दूर्वा के अतिरिक्त कुछ नहीं खाता लेकिन भगवान् श्रीकृष्ण ने ऐसा कहा है तो उन्होने प्रसन्नतापूर्वक पन्द्रह थाली भोजन खा लिया। दुर्वासा ऋषि को सन्तुष्ट करके, उन्हें प्रणाम कर, आशीर्वाद लेकर वापस गोपियाँ यमुना जी के पास पहुँची। वहाँ देखा कि यमुना जी का जलस्तर अभी भी बड़ा हुआ है।

गोपियों ने दुर्वासा ऋषि के पास जाकर कहा कि अब हमें यमुना जी को पार करके जाना है। दुर्वासा जी ने कहा कि यमुना मैया से कहना दुर्वासा ने दूर्वा के अतिरिक्त कभी कुछ नहीं खाया तो रास्ता दे दो। गोपियों ने भगवान् श्रीकृष्ण से तो कह दिया था पर यहाँ वे दुर्वासा ऋषि से यह नहीं कह पाई कि आप ऐसा कैसे बोल रहे हैं कि आपने हमारे सामने ही भोजन किया था। फिर भी उन्होंने यमुना जी के पास जाकर वैसा ही कहा। यह सुनकर यमुना मैया ने तुरन्त रास्ता दे दिया।

यमुना जी को पार करके घोर आश्चर्य से भरी गोपियाँ भगवान् श्रीकृष्ण के पास पहुँचीं। भगवान् श्रीकृष्ण ने पूछा कि दुर्वासा ऋषि को भोजन कराया? उन्होंने क्या कहा? और तरह-तरह के प्रश्न पूछने लगे। गोपियों ने कहा कि हे कृष्ण! पहले हमारी शङ्का का समाधान करो कि वह कृष्ण कौन हैं, जिन्होंने स्त्री मुख नहीं देखा और दुर्वासा कौन हैं? जिन्होंने हमारे सामने भोजन किया? जिन्होंने हमें यमुना जी को रास्ता देने का उपाय बताया था। तुम तो दिन भर हमारे साथ रहते हो, हमें देखते हो और दुर्वासा ऋषि ने हमारे सामने ही भोजन किया था। हम यह सब सत्य कैसे मानें।

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा कि उस दिन जब मैं तुम्हें ज्ञान देने की बात कर रहा था तो तुमने मेरी बात नहीं सुनी थी। गोपियों ने कहा कि तुम्हारी शिक्षा तो हमें नहीं समझ आई। भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा कि मैं तुम्हारे साथ रहता हूँ इसलिए तुमको लगता है मैं तुम्हें देखता हूँ, लेकिन मैं मन से किसी को स्पर्श नहीं करता।

यदि आँखें होते हुए भी मन भोगों को स्पर्श नहीं करता तो वह नहीं देखने के समान है।

दुर्वासा ऋषि ने तुम्हारे देखते-देखते भोजन खा लिया लेकिन उस भोजन को खाने पर उनके मन में आसक्ति नहीं थी। उनका मन उसमें नहीं लगा था। परिणामस्वरूप खाने के बाद भी वह भोजन उन्होंने नहीं खाया था।
इसलिए दोनों बार यमुना मैया ने तुम्हें रास्ता दे दिया।

गुणातीत का व्यवहार सामान्य मनुष्य जैसा दिखाई देने पर भी उसका मन उनके जैसा नहीं होता।

हम भी हवाई जहाज में यात्रा करते हैं और पूज्य स्वामी जी भी वायुयान में चलते हैं। जब हम वायुयान में बैठते हैं तो हमारे मन में एक विशिष्ट भाव रहता है जबकि पूज्य स्वामी जी के मन में ऐसा कोई भाव नहीं होता।

हम भी भोजन करते हैं और पूज्य स्वामी जी भी भोजन करते हैं। हमें भोजन में रस आता है पर स्वामी जी ऐसा अनुभव नहीं करते। उनको भोजन में क्या प्रिय है? चालीस साल से उनकी रसोई बनाने वाला व्यक्ति भी नहीं जानता कि स्वामी जी को किस प्रकार का भोजन प्रिय है।

संन्यास लेने से पूर्व जब तक वे घर पर रहे उनकी माँ को भी उनकी रुचि-अरुचि का पता नहीं लगा। क्योंकि कभी भी अच्छा

लगने पर उन्होंने दोबारा नहीं लिया। खाना अच्छा न लगा हो और उसे छोड़ दिया हो, ऐसा भी उन्होंने कभी नहीं किया।

हम तो अच्छा खाना होने पर कई बार ले लेते हैं और खाना अच्छा नहीं लगता तो उसे खाते नहीं।

14.22

श्रीभगवानुवाच
प्रकाशं(ञ्) च प्रवृत्तिं(ञ्) च, मोहमेव च पाण्डव।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि, न निवृत्तानि काङ्क्षति॥14.22॥

श्री भगवान बोले – हे पाण्डव! प्रकाश और प्रवृति तथा मोह – (ये सभी) अच्छी तरह से प्रवृत्त हो जायँ तो भी (गुणातीत मनुष्य) इनसे द्वेष नहीं करता और (ये सभी) निवृत्त हो जायँ तो (इनकी) इच्छा नहीं करता।

विवेचन-
श्रीभगवान् प्रसन्न होकर गुणातीत के लक्षण बताते हुए अर्जुन से कहते हैं कि जो पुरुष **सतोगुण के कारण प्रकाश को**, **रजोगुण के कारण प्रवृत्ति को** और **तमोगुण के कारण मोह को** प्राप्त होने पर **न तो द्वेष करता है** और **न ही निवृत्त होने पर उसकी आकाङ्क्षा करता है**।

जो जीवन में तमोगुण और रजोगुण को दबाकर सत्त्वगुण को बढ़ाने के पश्चात् सत्त्वगुण का उल्लङ्घन करके सत्त्वगुण के भी पार चला जाता है वह गुणातीत है।

दुर्वासा ऋषि के सामने थाली आ गई तो उन्होंने थाली से भोजन कर लिया। कभी नहीं कहा कि मैं तो दूर्वा खाता हूँ, भोजन नहीं करता। उनको यह भाव नहीं है कि मैंने आज भोजन किया है तो कल भी मुझे भोजन ही चाहिए।

न तो उनकी प्रवृत्ति है न कर्म से निवृत्ति ।

14.23

उदासीनवदासीनो, गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्येव, योऽवतिष्ठति नेङ्गते॥14.23॥

जो उदासीन की तरह स्थित है (और) (जो) गुणों के द्वारा विचलित नहीं किया जा सकता (तथा) गुण ही (गुणों में) बरत रहे हैं – इस भाव से जो (अपने स्वरूप में ही) स्थित रहता है (और स्वयं कोई भी) चेष्टा नहीं करता।

विवेचनः
श्रीभगवान् कहते हैं कि **जो साक्षी के सदृश्य रहता है, गुणों के द्वारा विचलित नहीं होता, जिस के गुण ही गुण को बरत रहे होते हैं, वह गुणातीत है।**

अर्थात्

जो भौतिक गुणों की इन समस्त प्रतिक्रियाओं से निश्चल तथा अविचलित रहता है एवं यह जानकर कि मात्र गुण ही क्रियाशील हैं, उदासीन तथा दिव्य बना रहता है, जो अपने आप में स्थित है।

गुणातीत योगी- ऋषि दुर्वासा

दुर्वासा ऋषि बैठे हैं। भोजन आ गया है। आँखें भोजन को देखती हैं, हाथ भोजन को उठाता है, मुख भोजन को चबाता है, गला उसे निगल लेता है और पेट भोजन को पचा देता है। दुर्वासा ऋषि कहते हैं कि मैं भोजन नहीं करता। सारे काम शरीर के

विभिन्न अङ्गों द्वारा हो रहे हैं, मैं कुछ नहीं करता। गुण ही गुणों में रम गए हैं।

वह साक्षी के सदृश सभी बातों को देखता है और ऐसा समझते हुए परमात्मा में स्थित रहता है।

14.24

समदुःखसुखः(स्) स्वस्थः(स्), समलोष्टाश्मकाञ्चनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरः(स्), तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥14.24॥

जो धीर मनुष्य सुख-दुःख में सम (तथा) अपने स्वरूप में स्थित रहता है; जो मिट्टी के ढेले, पत्थर और सोने में सम रहता है, जो प्रिय-अप्रिय में सम रहता है। जो अपनी निन्दा-स्तुति में सम रहता है; जो मान-अपमान में सम रहता है; जो मित्र-शत्रु के पक्ष में सम रहता है (और) जो सम्पूर्ण कर्मों के आरम्भ का त्यागी है, वह मनुष्य गुणातीत कहा जाता है। (14.24-14.25)

विवेचन-
श्रीभगवान् कहते हैं, जो निरन्तर परमात्मा में स्थित रहता है, वह धीर मनुष्य है। वह सुख-दुःख में समान रहने वाला, मित्र-शत्रु में समान भाव रखने वाला, ज्ञानी, प्रिय-अप्रिय को एक समान मानने वाला है।

सुख-दु:ख को समान समझता है। न सुख आने पर प्रसन्न होता है और न दु:ख आने पर दु:खी होता है।

हम लोग सुख आने पर फेसबुक पर लिख देते हैं। फिर देखते हैं किसने पसन्द किया? किसने उस पर टिप्पणी की? थोड़ा उदास हो जाने पर या मन की न हो तो दर्द भरे गीत लगा लेते हैं।

कोई टूटे हुए दिल से आज ये पूछे कि तेरा हाल क्या है?
वो जो पूछे लेते किस बात का गम है।
किस बात का गम है वो जो पूछ लेते।

जो सुख-दु:ख का समान समझने वाला है।
वह मिट्टी, पत्थर और स्वर्ण को समान समझता है। ऐसा नहीं है कि वह मिट्टी को तिजोरी में रखता है और स्वर्ण को बाहर फेंक देता है। वह उनका मूल्य और उपयोगिता समझता है। वह पत्थर को पत्थर के स्थान पर और स्वर्ण को स्वर्ण के स्थान पर रखता है। जिसे जहाँ रखना है उसे वहाँ रखता है।

किसी में प्रीति नहीं लगाता।

हमारे यहाँ शास्त्रों में दो सिद्धान्त हैं - समदर्शन और समवर्तन।
वह समदर्शन करता है, समवर्तन नहीं करता।

आजकल क्या हो गया है जो माना जाने लगा है कि सारे धर्म समान है।

क्या ऐसा है कि हमारा धर्म किसी को गोली मारने की आज्ञा देता है। कभी भी हमारे धर्म ने ऐसा नहीं सिखाया। सारे धर्म समान होते तो हम भी गोली मार देते। हो गया हमारे साथ तो हम भी कर लेंगे।

हमें यह गलत पाठ पढ़ाया गया है- "सर्व धर्म समभाव"

समदर्शन - सभी में ईश्वर को देखना। आतङ्कवादी में भी श्रीभगवान् को देखना।

किसी आतङ्कवादी को देखो तो उसे खाना नहीं खिलाना अपितु उसे मारना। ये मार खाने लायक हैं।

समवर्तन और समदर्शन-

कुत्ते में श्रीभगवान् देखना समदर्शन है। हम तो सभी को समान समझते हैं।
कुत्ते को रोटी खिलानी हो तो देहरी के बाहर खिलाएँ।

समदर्शन करें लेकिन समवर्तन ना करें।

सन्त को उत्तम आसन पर बैठा कर खाना खिलाएँ। भिक्षा देकर विदा करें। पिता को आदर से बैठा कर खाना खिलाएँ। अतिथि को मेज-कुर्सी पर बैठा कर खाना खिलाएँ। कुत्ते को द्वार के बाहर रोटी खिलाएँ।

समदर्शन से सभी की क्षुधा पूर्ति करना किन्तु समवर्तन नहीं करना।
माँ, बहन, पत्नी से भी समदर्शन हो, समवर्तन नहीं।

जो प्रिय-अप्रिय, तुल्य-निन्दा, मान-अपमान में एक समान रहता है।

फूलों की चिन्ता न करे
काँटों को सिर पर न धरे।
मान और अपमान ही दोनों जिसके लिए समान रे
वह सच्चा इन्सान रे, वह सच्चा इन्सान रे।

14.25

मानापमानयोस्तुल्यः(स्), तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी, गुणातीतः(स्) स उच्यते॥14.25॥

विवेचन-

गुणातीत मनुष्य के लक्षण,

श्रीभगवान् कहते हैं कि **जो मान-अपमान में सम रहता है, जो मित्र-शत्रु के पक्ष में सम रहता है और जो सम्पूर्ण कर्मों के आरम्भ से कर्ताभाव से मुक्त है, वह मनुष्य गुणातीत कहा जाता है।**

गुणत्रयविभागयोग गुणत्रय सत्त्व, रज तम का अध्याय है। सम्पूर्ण प्रकृति पदार्थ और क्रिया का परिणाम है इसीलिए ये दोनों तीनों गुणों से आच्छादित हैं।

उपनिषद् के अनुसार-
व्यक्ति तदनुसार लक्षणम्, लक्षणम तदनुसार व्यक्तिः।

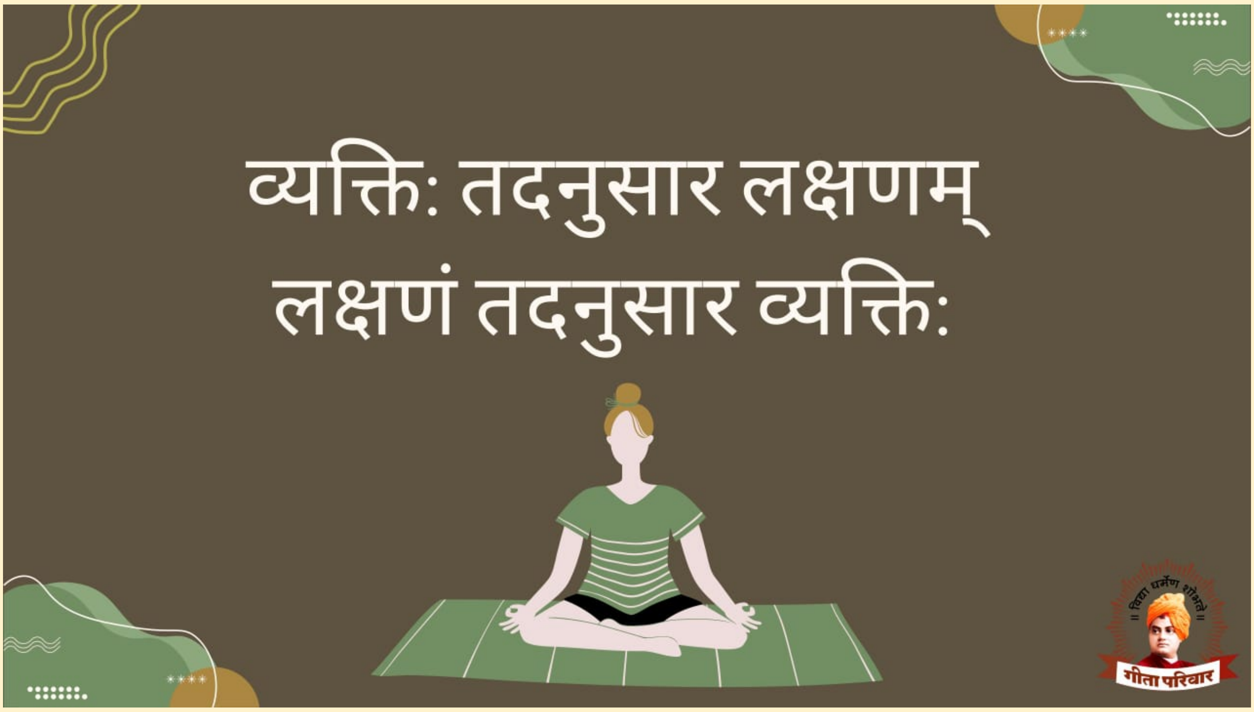

जैसा व्यक्ति होता है उसके अनुसार उसके लक्षण होते हैं या जैसे लक्षण होते हैं उनके अनुसार उसका व्यक्तित्व होता है।

सात्त्विक व्यक्ति का व्यवहार सात्त्विक होगा या सात्त्विक लक्षणों वाला व्यक्ति सात्त्विक होगा। एक ही बात है।

प्रत्येक पदार्थ व क्रिया इन तीनों गुणों से आच्छादित होती है, बात केवल प्रधानता की है। हम अपने को सत्त्वगुणी मानते हैं तो क्या हमारे भीतर वैसे लक्षण हैं? यदि लक्षण नहीं हैं तो इसका अर्थ यह नहीं कि हम सत्त्वगुणी नहीं हैं। तथा ऐसे में अपने को रजोगुणी मानें

या तमोगुणी? हम पूरे दिन में कभी सतोगुणी होते हैं, कभी रजोगुणी और कभी तमोगुणी होते हैं।

अब हम आत्म मूल्याङ्कन के लिए गुणत्रय- सत्त्व, रज, तम को देखते हैं। ये सारे हमें दूसरों पर लागू नहीं करने हैं।

गुणत्रय- सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण के निम्न लक्षण होते हैं।

1. व्यवहार -

सात्त्विक- सन्तुष्ट
सत्त्वगुणी किसी भी प्रकार की परिस्थिति में सन्तुष्ट रहता है। वह सदा श्रीभगवान् को धन्यवाद करता है। उसके जीवन में शिकायतें कम होती हैं।

भगवान् श्रीराम ने माता शबरी को नवधा भक्ति का ज्ञान देते समय आठवीं भक्ति के विषय में कहा–

आठव जथा लाभ सन्तोषा।

श्रीमद्भगवद्गीता जी के बारहवें अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं –

सन्तुष्टो येन केन चित्।।

जो जैसा है, मैं सन्तुष्ट हूँ, मुझे कोई परिवर्तन नहीं चाहिए।

मैं तो सन्तुष्ट हूँ पर मेरे आस-पास वाले लोग मुझसे सन्तुष्ट हैं या नहीं? मेरे आस-पास वाले लोग, मेरे साथ रहने वाले लोग मुझसे असन्तुष्ट तो नहीं? सतोगुणी इसका भी ध्यान रखता है।

परम श्रद्धेय ब्रह्मलीन जयदयाल जी गोयन्दका की कोलकाता में गद्दी थी। वे वहाँ व्यापार करते थे। एक बार कोलकाता में ज्वार का मूल्य बढ़ गया तो उन्होंने राजस्थान से कई ट्रक ज्वार, कम मूल्य पर मँगवा लिया। उनके ऐसा करते ही बाजार में ज्वार की कीमत कम हो गई। शाम को व्यापारियों ने सेठ जी के आगे जाकर अपनी बात कही कि इससे उन्हें हानि होगी क्योंकि उन्होंने अधिक मूल्य

पर ज्वार खरीदा था। यह सुनकर सेठ जी की आँखों में आँसू आ गए। उन्होंने कहा कि मेरा यह आशय नहीं था कि किसी का नुकसान हो। उन्होंने सारा ज्वार उसी रास्ते से ही वापस भिजवा दिया। जहाँ तक हो सके मेरे आस-पास के लोग किसी भी प्रकार से दुःखी न हों। मेरे सही करने से भी दूसरों का कष्ट हो रहा हो तो मुझे वह कार्य नहीं करना है।

सात्त्विक व्यक्ति स्वयं हानि उठाकर भी दूसरों का लाभ करता है।

राजसिक – असन्तुष्ट
रजोगुणी यही कहता है कि यदि मेरा अमुक काम हो जाए तो मैं सन्तुष्ट हो जाऊँ। सारा दिन इसी काम में माथापच्ची करता है। होना तो सन्तोषी चाहता है पर कामनाएँ समाप्त नहीं होतीं। जीवन भर सन्तोष की दौड़ में भागता रहता है।

जीवन में शिकायतें कम नहीं होती। मेरा पति ऐसा, मेरी पत्नी ऐसी, मेरी सास ऐसी, मेरा अधिकारी ऐसा, मेरा पड़ोसी ऐसा, मेरे कर्मचारी ऐसे हैं। सरकार बेकार है, आजकल के बच्चे अच्छे नहीं है। मेरा घर बन जाए, नौकरी मिल जाए, विवाह हो जाए, ऐसा हो जाए, वैसा हो जाए तो मैं सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

तामसिक – आलस्य से सन्तुष्ट
देखने में सतोगुणी के जैसा ही लगता है। काम करने की प्रवृत्ति नहीं है। अपने से कुछ लेना-देना नहीं। दूसरे से असन्तुष्ट रहता है। पड़ोसी ऐसा क्यों कर रहा है? वैसा क्यों कर रहा है? मौज में क्यों रह रहा है? इतनी सम्पत्ति कैसे अर्जित कर ली? अपने को मिले या न मिले, पर दूसरे की प्रगति से जलता है। वह आलस में सन्तुष्ट रहता है पर उसे दूसरों की प्रगति से असन्तोष होता है।

2. वाणी -

सात्त्विक -
सत्य बोलता है और सबसे प्रिय बात करता है। जिसकी वाणी धीमी है है(Volume और speed दोनों कम हैं)- वह सतोगुणी है।

श्रीभगवान् ने कहा
वाक्यं सत्यं प्रियहितं च।

मैं तो सच बोलता हूँ, दूसरे को बुरा लगे तो लगे। ऐसा सुनाया एक हफ्ते तक नींद नहीं आएगी।

नीतिशास्त्र में कहा गया है -
सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यम् अप्रियम्।

श्रीभगवान् ने कहा कि सत्य को प्रिय ढङ्ग से बोलना चाहिए। जिस सत्य को प्रिय ढङ्ग से बोलना सम्भव न हो तो चुप हो जाएँ। हम उल्टा करते हैं, सच बोलने के बहाने जो किसी को बुरा लगे, वह पहले बोलते हैं। चुप रहिए। दूसरे को बुरा लगे वह मत बोलिए। जब तक बहुत आवश्यक ना हो तब तक नहीं बोलना चाहिए। यदि बोलना भी हो तो उस अप्रिय बात को चाशनी में लपेटकर बोलना चाहिए।

सच को मीठी चाशनी में लपेटकर बोलने वाला सात्त्विक है।

इनका मानना है -
ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय।।

राजसिक-
दम्भी होते है, जोर-जोर से बोलने वाले होते हैं। अपने को बड़ा दिखाने का प्रयास करता है। वाणी का Volume और speed दोनों तीव्र हैं। अपनी बात सिद्ध करने के लिए तीव्र ध्वनि से बोलता है और झगड़ा करता है। रास्ते में जा रही गाड़ी को देखकर ही चिल्लाने लगता है, अरे! अभी गाड़ी लग जाती तो क्या होता? एक्सीडेंट हो जाता तो क्या होता? तुम्हारी गाड़ी से दूसरे का पैर टूट जाता।

वह सदा दूसरों को ज्ञान देता है, उत्तेजित होकर बोलता है। अपने को सही साबित करने के लिए जोर से बोलता है। कटाक्ष करता है, उपहास और व्यङ्ग्य करता है। अवसर मिलने पर दूसरों को नीचा दिखाने का प्रयास करता है।

इनका मानना है -
ऐसी वाणी बोलिए, सबसे झगड़ा होए।
लेकिन उससे झगड़ा न करें, जो तुमसे तगड़ा होए।।

तामसिक- विवेकहीन
तमोगुणी हर किसी से झगड़ा कर लेता है। बिना कारण अपशब्द बोलता है। ऐसे लोगों को चुप कराना पड़ता है। किसी का ध्यान नहीं करता, चाहे अपनी हानि हो जाए। हितैषी को भी उल्टा बोल देता है। उल्टी बात करता है। विवेकहीन होता है। दूसरों को कष्ट देने वाला होता है। अपने लाभ करने वाले को वह भी कष्ट देता है। अपनी हानि करता है।

3. भोजन- जैसा अन्न वैसा मन।

सात्त्विक
भूख के अनुसार भोजन करता है। जितनी भूख लगी है उतना ही भोजन करता है। क्षुधा पूर्ति के लिए प्रसन्नता पूर्वक भोजन करता है।

राजसिक
स्वाद के लिए भोजन करता है। भोजन का समय होने पर पसन्द का भोजन मिल गया तो खा लिया। यदि पता चला कि आज अच्छा खाना नहीं बना है तो बाहर से मँगा लिया। वह भोजन में स्वाद ढूँढ़ता है।

तामसिक
अशुद्ध मादक भोजन करता है।
भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार नहीं करता। मांस-मदिरा का सेवन करता है। सात्त्विक भोजन अच्छा नहीं लगता। मन का कुछ आ गया, पसन्द का मिल गया तो खा लिया। पेट भरा होने पर भी खा लेता है।

4. वस्त्र

सात्त्विक -
श्वेत, हल्के रङ्ग के, सूती, आरामदायक, सुविधाजनक होते हैं, फैशनेबल नहीं होते ।

राजसिक
चटक रङ्गो के, फैशनेबल, रङ्गीन, सुन्दर, नवीन।

तामसिक
मैले, असुविधाजनक, असभ्य, उल्हे, पुल्टे, मैले कुचले, बिना धुले हुए, जीन्स लेगा ताकि मैली होने पर मैली दिखाई न दें।

5. आवास

सात्त्विक-
शुद्ध, स्वच्छ, व्यवस्थित, हवादार, भगवान के सुन्दर चित्रों से युक्त होगा

राजसिक-
विलासितापूर्ण घर में कीमती फर्नीचर, कीमती सजावटी सामान, कृत्रिम प्रकाश, छोटी-छोटी खिडकियाँ होंगी।

तामसिक -
घर अव्यवस्थित होगा, धूल जमी होगी, कपड़े अव्यवस्थित होंगे जाले लगे होंगे। अलमारियाँ गन्दी होंगी ।

6. निवेश

सात्त्विक -
सुरक्षित निवेश में विश्वास करता है, जहाँ खतरा नहीं है। दान-पुण्य में पैसा लगाता है, जिससे उसका आगे का जन्म सफल हो। वह अपने धन को सुरक्षित रखने के लिए किसान विकास पत्र, एफ डी, पी.पी.एफ.और एल.आई.सी में भी पैसा लगाता है।

राजसिक-
अपना पैसा म्यूचुअल फण्ड, शेयर या सट्टे में लगाता है, जिससे अधिक पैसै आएँ।

तामसिक-
अपना पैसा जुए, लॉटरी में उड़ाता है। दस रूपये के सौ रूपये बन जाएँ या एक बार में पैसे दुगुना हो जाएं। उसके मन में हर समय यही विचार चलता है।

7. कार्य

सात्त्विक
कर्त्तव्य के रूप में कार्य करता है। उसका क्या कर्त्तव्य है, वह अपने श्रेय का ध्यान रखता है।
What are my duties? What everyone os expecting out of me?

राजसिक
मन के लिए करता है। वह श्रेय को जानता है, परन्तु उसकी दृष्टि प्रेय पर होती है। वह वही करता है जो उसका मन करता है, कर्त्तव्य हो या न हो।

तामसिक -
जबरदस्ती कुछ करवा लिया जाए तो विवश होकर वह कुछ काम कर देता है। उसका ध्येय है-

अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गए, सबके दाता राम॥

मुझे क्यों काम करना है, मैं क्यों करूँ जिसे करना हो वह करें।
उसे न श्रेय से प्रयोजन है न प्रेय से।

8. भाव

सात्त्विक -
जो करता है वह दूसरों के हित के लिए करता है।

लङ्काकाण्ड में जब सेना समुद्र पार पहुँच गई तो भगवान् श्रीराम ने अङ्गद को शान्ति दूत बनाकर भेजा। अङ्गद ने रामजी से पूछा कि मुझे वहाँ क्या कहना है? इस पर श्रीरामजी ने कहा-

काजु हमार तासु हित होई। रिपु सन करेहु बतकही सोई॥

शत्रु से वे ही बातें करना, जिससे हमारा काम हो जाये और उसका भी कल्याण हो। हमारा काम भी बन जाए और उसका भी हित हो जाए।

राजसिक -
रजोगुणी के लिए अपना स्वार्थ साधना सर्वोपरि होता है।

कई बार तो मन्दिर में जाने वाले भी कुछ ऐसे ही करते हैं। एक आदमी ने अपनी चप्पल की जगह बनाने के लिए वहाँ पड़ी सारी चप्पलों को पैर से हटा कर एक ओर कर दिया और अपनी चप्पल उतार कर अन्दर चला गया। चाहे बाद में अन्य लोगों को अपनी चप्पलें ढूँढने में कितनी ही कठिनाई क्यों न हो।

रजोगुणी का तो यही ध्येय वाक्य रहता है-
अपना काम बनता, भाड़ में जाए जनता।

तामसिक-
अपना भी नाश करता है दूसरों का भी नाश करता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं -
जिमि हिमि उपल कृषी दलि गरही।

वे दूसरों का धन बर्बाद करके, खुद भी नष्ट हो जाते हैं, जैसे खेती का नाश करके, ओला स्वयं भी नष्ट हो जाता है। जिस प्रकार ओले फसल को नुकसान पहुँचाते हैं और खुद भी नष्ट हो जाते हैं। तमोगुणी व्यक्ति अपने हित का विचार नहीं करता और दूसरों के भी हित का विचार नहीं करता है।

9. रुचि

सात्त्विक-
धर्म, कार्य और सेवा में रुचि रहती है। समाज में कोई अच्छा काम हो और उसमें मेरा भी योगदान हो जाए।

राजसिक-
दम्भ और मान में रुचि रहती है। वह नाम, यश, लोभ बढ़ाने के लिए सारा दिन काम करता है, दिखावा करता है। लोग मुझे जानें, मुझे मानें, अच्छा मानें।

तामसिक-
सदैव अधर्म की बातें करता है और विपरीत काम करता है। अधर्म में रुचि रखता है।

10. इच्छाएँ

सात्त्विक-
आवश्यकताओं को महत्त्व देता है।
Needs और wants के अन्तर को जानता है।

राजसिक-
इच्छाओं को आवश्यकता बना लेता है।
शादियों के मौसम में स्त्रियाँ अपने कपड़े और अलङ्करण दिखाने की चाह में ठण्ड में सिकुड़ती रहती हैं लेकिन गर्म वस्त्र नहीं पहनतीं। इच्छा पूर्ति के लिए आवश्यकता का त्याग कर देती हैं।

तामसिक-
दूसरों की कामनाओं में बाधा बनता है। अपनी इच्छा की परवाह नहीं लेकिन दूसरों का काम नहीं बनना चाहिए।

11. सङ्ग

सात्त्विक-
सज्जनों का सङ्ग करता है, उसे अच्छे लोगों के साथ रहना पसन्द है।

राजसिक-
सदैव धनी व बड़े लोगों का सङ्ग करता है। उच्च पदस्थ का सङ्ग, धनी, प्रभावशाली व्यक्तियों का सङ्ग करता है।

तामसिक-
अच्छे लोगों से दूर रहता है।

सङ्ग के महत्त्व को बताते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं -
गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा। कीचहिं मिलइ नीच जल संगा॥

धूल यदि वायु का सङ्ग करती है तो आकाश में जाती है लेकिन जल के सङ्ग में कीचड़ बनकर जमीन पर फैल जाती है। हम वायु का सङ्ग करके अपने को ऊपर ले जाते हैं और कीचड़ का सङ्ग करके, अपने जीवन को कीचड़ बना देते हैं।

सङ्ग और कुसङ्ग जीवन को बनाने, बिगाड़ने का कार्य करते हैं।

एक बार गाँधी जी के पास एक व्यक्ति बारह तेरह पृष्ठों का पत्र लेकर गया। उसमें उनकी बड़ी आलोचनाएँ लिखी थीं, अपेक्षित कार्य पद्धति लिखी थी। गाँधी जी ने पढ़कर उस में लगी पिन को निकालकर अपने पास रख ली और वह पत्र उसी व्यक्ति को लौटा दिया। व्यक्ति के पूछने पर गाँधी जी ने कहा कि जो काम का था वह मैंने अपने पास रख लिया और बिना काम का आपको दे दिया। हम में से कोई होता तो चिट्ठी पढ़कर चिढ़ जाता। ऐसे ही हमें भी अपने काम की बातें रख लेनी चाहिए और बाकी छोड़ देनी चाहिए।

ये सारी बातें हम में हैं। कहीं पर परिस्थिति विशेष में सतोगुणी भी तमोगुणी वाले कार्य करता दिखता है। किसके जीवन में किसकी प्रधानता है। यह दिखाता है कि किसका जीवन अधिकांशतः सतोगुणी है, रजोगुणी है या तमोगुणी है।

एक घटना या कार्य, जीवन को बिगाड़ती नहीं है। दूसरे का अवलोकन करना है तो पूरा जीवन देखना चाहिए। एक अच्छी बात

बोली तो व्यक्ति अच्छा नहीं होगा और एक अनुचित बात बोली तो व्यक्ति बुरा नहीं होता। एक काम त्रुटिपूर्ण हो गया तो व्यक्ति ठीक नहीं हैं, ऐसा नहीं होना चाहिए। एक अच्छे काम से मनुष्य अच्छा नहीं होता।

कभी-कभी उत्तम व्यक्ति से एक अनुचित काम हो जाता है तो हम उसकी जीवन भर आलोचना करते रहते हैं। पूरे जीवन का अवलोकन करना ही उचित होता है, किसी के प्रति अपने मत का निर्धारण करने से पूर्व।

14.26

मां(ञ्) च योऽव्यभिचारेण, भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान्, ब्रह्मभूयाय कल्पते॥14.26॥

और जो मनुष्य अव्यभिचारी भक्तियोग के द्वारा मेरा सेवन करता है, वह इन गुणों का अतिक्रमण करके ब्रह्म प्राप्ति का पात्र हो जाता है।

विवेचन-

भगवत् प्राप्ति मार्ग।

श्रीभगवान् कहते हैं कि जो व्यक्ति अव्यभिचारिणी भक्तियोग के द्वारा मुझको भजता है वह भली-भाँति जानता है कि वह भी मेरे गुणातीत सच्चिदानन्द रूप को प्राप्त होगा।

यहाँ लोग अव्यभिचारिणी भक्ति का गलत अर्थ निकलते हैं। वे सोचते है कि मैं भगवान् श्रीरामजी का भक्त हूँ तो शिवजी के मन्दिर में नहीं जाऊँगा, भगवान् शिवजी का भक्त हूँ तो भगवान् श्रीकृष्ण के मन्दिर में नहीं जाऊँगा। भगवान् श्रीकृष्ण का भक्त हूँ तो देवी के मन्दिर में नहीं जाऊँगा। यदि जाऊँगा तो मेरी भक्ति व्यभिचारिणी भक्ति हो जाएगी। ऐसा नहीं होता।

निरन्तर श्रीभगवान् के चरणों में इस भाव के साथ जुड़ना कि मुझे संसार की नहीं श्रीभगवान् की प्राप्ति हो, वह अव्यभिचारिणी भक्ति है।

सबको सांसारिक उन्नति के साथ श्रीभगवान् भी चाहिए। हम सबको आध्यात्मिक उन्नति सांसारिक उन्नति के साथ चाहिए। हमारी कामना होती है कि स्वास्थ्य भी अच्छा हो, परिवार भी अच्छा हो, सारी सुख-सुविधाएँ हों और भगवान की भी प्राप्ति हो।

हमें संसार और श्रीभगवान् एक साथ चाहिए। ऐसा सम्भव नहीं है।

जो संसार के प्रति वैराग्य करके श्रीभगवान् का भजन करते हैं। वे अव्यभिचारिणी भक्ति करते हैं।

मुझे आपके अतिरिक्त कुछ और नहीं चाहिए। मैं आपसे कुछ और नहीं माँगता, यह वृत्ति अव्यभिचारिणी है।

14.27

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहम्, अमृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य, सुखस्यैकान्तिकस्य च॥14.27॥

क्योंकि ब्रह्म का और अविनाशी अमृत का तथा शाश्वत धर्म का और ऐकान्तिक सुख का आश्रय मैं (ही हूँ)।

विवेचन-
श्रीभगवान् कहते हैं कि **उस अविनाशी परम ब्रह्म, आत्मा और धर्म की सारी बातों का अन्तिम आश्रय मैं ही हूँ।**

श्रीमद्भगवद्गीता जी का सार है-
मामेकं शरणं व्रज।

सभी अभीष्टों का अन्तिम आश्रय मुझ में ही है।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं कि दस स्थानों पर हमारी ममता होती है-
जननी, जनक बन्धु सुन दारा। तन धन भवन सुहृद परिवारा।।

भवन पर लोभ भी होता है, मोह भी होता है। मेरा पुश्तैनी मकान है, बेचूँगा नहीं। भले ही धन का अभाव हो। उसे मोह कहते हैं।

भगवान् श्रीराम ने उत्तरकाण्ड में कहा -
सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि डोरी।
अर्थात्
दस धागों को बट कर रस्सी बनाओ। सबकी ममता को मुझमें बाँधो।

सारी चीजें आपने ही दी हैं। सब कुछ आपने दिया है। सब आपका दिया है, मन में ऐसा भाव आ जाए तो खोने का दु:ख नहीं होगा।

हम श्रीभगवान् को ही परम मानकर उनके आश्रय हो जाएँ।

हरि ॐ तत्सत् और हरिनाम सङ्कीर्तन के साथ गुणत्रयविभागयोग का विवचन का सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् **प्रश्नोत्तर सत्र** आरम्भ हुआ।

प्रश्नोत्तर सत्र

प्रश्नकर्ता- निशा गर्ग दीदी।
प्रश्न- कभी-कभी हमारे जीवन में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। जिसके कारण हमें किन्हीं दो पक्षों के समक्ष वह सत्य बोलना पड़ता है जो एक पक्ष हेतु तो सत्य है परन्तु अन्य पक्ष हेतु असत्य। ऐसी स्थिति में हम क्या कर सकते हैं? मेरा मार्ग दर्शन कीजिए।
उत्तर- ये परिस्थितियाँ यदा-कदा हम सभी के जीवन में आ ही जाती हैं। जब हमें किसी एक मार्ग का चयन करना पड़ता है। जीवन में आने वाली इन विषम परिस्थितियों में भी श्रीमद्भगवद्गीता जी के माध्यम से श्रीभगवान् हम सभी का मार्ग दर्शन करते हुए कहते हैं कि-

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् |
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ||

इस श्लोक के द्वारा श्रीभगवान् यह वर्णित करते हैं कि मानव जीवन में कैसी भी परिस्थितियाँ उत्पन्न हों, प्रत्येक मनुष्य को सत्य के पथ का ही अनुसरण करना चाहिए, परन्तु जब किसी मनुष्य के समक्ष कोई सत्य प्रस्तुत किया जाए तब वह उस व्यक्ति को पीड़ा पहुँचाने वाला या उसका अहित करने वाला नहीं होना चाहिए।

किसी भी मनुष्य के समक्ष सत्य का प्रस्तुतिकरण करते हुए अपने विवेक सहित वाक् कौशल का प्रदर्शन करना चाहिए ताकि वह सत्य किसी को अप्रसन्न न करे तथा सत्य बोलते हुए सर्वदा मङ्गलकारी एवं विषाद रहित शब्दों का चयन किया जाना ही उचित होगा। जीवन में आने वाली किसी विषम परिस्थिति में यदि हम असत्य बोलते हैं तब हमारा यह कृत्य राजसी एवं तामसी प्रवृत्ति के अन्तर्गत आता है। ऐसी स्थिति में सात्त्विकता का ह्रास होता है।

सात्त्विकता को जीवन में धारण करने हेतु सत्य को कदापि न त्यागें तथा जीवन में आने वाली प्रत्येक परिस्थिति में सत्य का साथ आवश्यक है।

प्रश्नकर्ता- शीला मुराका दीदी।
प्रश्न- जब हम शान्ति पाठ करते हैं तब ॐ शान्ति तीन बार उच्चारित करते हैं। मैंने किसी आलेख का अध्ययन किया तथा उसके अनुसार तीन बार ॐ शान्ति का उच्चारण आध्यात्मिक, अधिदैविक, अधिभौतिक शक्तियों की शान्ति हेतु किया जाता है। आध्यात्मिक का तो मुझे ज्ञान है परन्तु अधिदैविक एवं अधिभौतिक से मैं अनभिज्ञ हूँ। यह क्या हैं?
उत्तर- मनुष्य को तीन प्रकार के दुख या ताप होते हैं, जिन्हें त्रिविध ताप कहा जाता है। वे हैं- आध्यात्मिक ताप, आधिभौतिक ताप और अधिदैविक ताप।

आध्यात्मिक ताप-□ मन और शरीर को कष्ट होने वाला दु:ख, जैसे कि अविद्या, राग, द्वेष, मूर्खता, बीमारी आदि।□ □ □ □ □

अधिभौतिक ताप-अन्य जीवों या बाहरी तत्वों से होने वाला दु:ख, जैसे कि जङ्गली जानवर, सर्प, या दुश्मन।□ □ □ □ □

अधिदैविक ताप- □ देवी-देवताओं या कर्मों से होने वाला दु:ख, जैसे कि प्राकृतिक आपदाएँ या भाग्य के कारण होने वाले कष्ट।

ये तीनों ताप ही मनुष्य के समाप्त हो जाएँ, इस हेतु ॐ शान्ति को तीन बार उच्चारित किया जाता है।

अ ओ म् यह भी तीन रूप हैं, जो ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश को दर्शाते हैं। सत्, रज एवं तम तीनों गुणों की साम्य अवस्था भी है।

संसार का उत्पन्न होना, गतिमान होना तथा प्रलय के द्वारा सृष्टि का अन्त। इन समस्त परिस्थितियों में श्रीभगवान् हमारी रक्षा करें तथा मानव के तीनों तापों का निवारण करें। इस हेतु ॐ शान्ति का तीन बार उद्घोष किया जाता है। हम इसे एक बार भी बोल सकते हैं परन्तु ऐसा नहीं किया जाता। शास्त्रानुसार ॐ शान्ति के उच्चारण की तीन बार पुनरावृत्ति की जाती है।

ताकि

श्रीभगवान् तीनों स्थितियों में हमारा उद्धार करें। परमात्मा हमारी रक्षा करें।

।।ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु।।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्याय:।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'गुणत्रयविभागयोग' नामक चौदहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||